1955C? **A Warning from Namisagar Ji**

Namisagar ji ki ek Chetavani (In Sanmati Sandesh)

स्व० पूज्य आ० नमिसागर महाराज की चेतावनी

श्री पं० हीरालाल जी सिद्धान्तशास्त्री, दिल्ली

आज वीतराग के उपासक सराग तो बन ही रहे हैं किन्तु उन्होंने भगवान को भी सराग बना दिया है, जिस प्रकार परिग्रह भी एक पाप है, यह बात किसी के मस्तिष्क आती भी नहीं है, इसी प्रकार हमें वीतरागता की ओर जाने के लिये वीतराग भगवान को वीतराग ही बने रहने देना चाहिये तथा अपने उपासना गृह के वातावरण को भी वीतराग बनाना चाहिये। लक्ष्मी के पुजारी को यह बात विचार से बाहर है।

सन् १९५१ की बात है, आ० नमिसागरजी और आ० सूर्यसागरजी का चातुर्मास दिल्ली में हो रहा था और मैं उन दिनों क्षु० पूर्णसागरजी के पास था। धर्मपुरा के नये मंदिर में उक्त आचार्यद्वय के भाषण के कभी पहले और कभी पीछे मेरे भी भाषण लगातार हो रहे थे। एक दिन की बात है, दैनिक पत्रों में यह समाचार आया कि दक्षिण के अमुक प्रान्त में कम्युनिष्टों ने अमुक उपद्रव कर दिया है और अमुक धर्मसंस्थान की सम्पत्ति लूट ली है। आ० नमिसागरजी कभी-कभी हिन्दी का दैनिक पत्र देखा करते थे। उक्त समाचार को पढ़कर उनके मानस पर बहुत आघातसा पहुँचा और वे प्रवचन करते हुए अत्यन्त द्रवित होकर भावावेश में कहने लगे—'अय दिल्लीवाले जैनियो! तुम कहाँ जा रहे हो? क्या कर रहे हो?' मैं सुन करके चौंका—आज महाराज क्या कह रहे हैं? कनड़ी भाषी होने के कारण वे शुद्ध हिन्दी में अपना भाव व्यक्त नहीं कर पाते थे और साधारण जनता को, या मुझे भी प्रायः उनकी बोली सहसा समझ में नहीं आती थी। अतएव मैं अत्यन्त सावधान होकर उनका भाषण सुनने लगा। महाराज लोगों को उत्सुक वदन देखकर बोले 'क्या समझे? और फिर अपना अभिप्राय स्पष्ट करते हुए कहने लगे—अरे वीतराग को सराग बनाकर तुम लोग कहाँ जा रहे हो? स्वर्ग में या नर्क में? जानते हो—वीतराग को सराग बनाने में कौनसा पाप होता है !!! बताऊँ? सुनो—मिथ्यात्व पाप होता है। तुम लोग वीतराग के मन्दिर में सरागी देवी-देवताओं की स्थापना कर उनकी पूजा-भक्ति करने लगे हो? यह सब क्या है? मिथ्यात्व है। इनके पूजने से तुम्हें धनादि मिल जायगा? कभी नहीं। यदि देवी-देवता तुम्हारी भक्ति से प्रसन्न भी हो जायँ, तो क्या देंगे? वही जो उनके पास है। समझे? वही संसार में डुबाने वाली भोग-सम्पदा देंगे। जिसमें मगन हो करके तुम फिर संसार-समुद्र में डूबोगे और फिर चतुर्गति में परिभ्रमण कर अनन्तकाल तक दुःख उठाते फिरोगे। तो

फिर क्या करना चाहिए? पद्मावती चक्रेश्वरी आदि सरागी देवों की पूजा भक्ति छोड़कर एकमात्र वीतराग देव की ही पूजा भक्ति करनी चाहिये। इसीसे तुम्हारे भीतर वीतरागता जागेगी और फिर तुम भी एक दिन वीतराग बनकर जगत् पूज्य बन जाओगे। बोलो जगत्-पूजक बने रहना अच्छा है, या जगत्पूज्य बनना?

लोग एक स्वर से बोल उठे—'बोलो आ० नमिसागर महाराज की जय।'

आचार्य महाराज ने अपना भाषण जारी रखते हुये कहा—अरे, तुम लोगों ने वीतराग को सराग बनाने के लिये चँवरछत्र को ही सोने-चाँदी का नहीं बनाया, किन्तु स्वयं वीतराग को ही सोने-चाँदी का बना डाला। भगवान् क्या सोने-चाँदी के थे? नहीं, उनका भी पार्थिव शरीर उन्हीं पुद्गल परमाणुओं से बना था, जिससे कि तुम्हारा हमारा। भगवान् सोने-चांदी के नहीं थे, उनके शरीर का रंग सोने-चाँदी जैसा था। और देखो, तुम कहोगे कि हमने तो भक्ति में आकर सैकड़ों हजारों रुपए लगाकर जो ये चाँदी-सोने के भगवान् बनाए हैं, सो कोई चुरा न ले जाय, इसके लिए हम लोगों ने इन्हें तालों में बन्द कर दिया, तिजोड़ियों

में बन्द कर दिया। । जानते हो, यह कितना बड़ा पाप है ? कौनसा पाप है ? अरे, भगवान् को तालों में बन्द करने से दर्शनावरणीय कर्म बन्धता है, दर्शनावरणीय कर्म। जिसके कारण तुम्हें कभी आत्मदर्शन नहीं हो सकेगा। जानते हो, पुराने काल में मन्दिरों पर ताले नहीं लगा करते थे। हमारे दक्षिण में आज भी अनेकों मन्दिरों पर ताले नहीं लगते हैं, किवाड़ नहीं लगते हैं, कि जिससे सब कोई सब काल उनका निर्बाध दर्शन कर सके। मंदिरों पर ताले लगाने से भक्त को दर्शन करने में अन्तराय होता है और उससे ताला लगाने वाले के भारी पाप बन्ध होता है। तुम कहोगे—महाराज, हम तो किसी को दर्शन से रोकने के लिए ताला नहीं लगाते हैं। हम तो देव और देवद्रव्य की रक्षा करने के लिये ताला लगाते हैं। तो क्या ऐसा कहने से तुम पाप से बच जाओगे ? अरे तुम्हारे भाव चाहे कुछ हों, पर क्रिया जो उलटी कर रहे हो, दूसरों के दर्शन में अन्तराय बनते हो, उससे तो पाप का बन्ध होगा ही। जानते हो, तत्त्वार्थसूत्र में क्या कहा है ? चाहे ज्ञात भाव से क्रिया करो और चाहे अज्ञातभाव से करो, पर पाप का बन्ध तो होगा ही। मैं यह विषपान कर रहा हूँ ऐसा जान करके चाहे विष पियो और चाहे अनजाने विष को पीलो, पर जानते हो दोनों का क्या फल होगा ? दोनों ही मरेंगे।

अपना भाषण जारी रखते हुए आचार्य महाराज बोले—तुम लोग अखबार पढ़ते हो, मालूम है, क्या समाचार आते हैं ? आज अमुक स्थान की मूर्ति चोरी चली गयी, आज अमुक स्थान के मन्दिर से सोने का छत्र-चंवर चोरी चला गया, आदि। यदि लोग भगवान को सोने-चाँदी का न बनवाते, सोने-चाँदी के छत्र-चंवर न चढ़ाते, तो कोई चुरा ही क्या ले जाता ? पहले सब जगह पाषाण की ही मूर्तियाँ बनती थीं, और उसी में छत्र-चंवर भामंडल आदि उकेरे रहते थे, तब कहीं चोरी होने की बात नहीं सुनी जाती थी। कोई चुराने ही आता, तो क्या चुरा ले जाता ? पर आज तो उल्टी गंगा बह रही है और लोग धर्म का विकृत रूप करते जा रहे है। मन्दिरों को भी अब सोने-चाँदी से सजाते जा रहे है। मैं कहता हूँ, मेरी बात दिल्ली वाले लिखकर रख लें। सारे भारत में कम्यूनिष्ट फैलते जा रहे है और वे बहुत जल्दी मन्दिरों को लूट लेंगे और उनके आने से पहले सरकार ही ऐसी कानून बनाती जा रही है कि जिससे सब मन्दिरों का धन सरकार के पास चला जायगा। इसलिये हे दिल्लीवाले जैनियो मेरी बात मानो—मन्दिरों में जितना सोना-चाँदी है, उनके उपकरण हैं, उन्हें बेचकर सब रुपया इकट्ठा करो और जो तुम्हारी समाज में गरीब हैं, पूँजी के लिए जिनके पास पैसा नहीं है, उनको उनकी आवश्यकता और स्थिति के अनुसार पूँजी के रूप में उस रुपये को बाँट दो और व्याज में उनसे प्रातः सायंकाल देव-दर्शन की तथा दिन में न्याय पूर्वक व्यापार करने की प्रतिज्ञा ग्रहण कराओ। फिर देखोगे कि जब लोगों को यह मालूम हो जायगा कि जैनियों ने अपने मन्दिरों का देव-द्रव्य गरीबों को बाँट दिया है, तब प्रथम तो तुम्हारे मन्दिरों पर कोई आक्रमण ही नहीं करेगा। और यदि इतने पर भी लोग आक्रमण करें और लूटमार को आवेंगे, तो जिन लोगों को पूँजी देकर उनकी आजीविका स्थिर की है, वे ही लोग मन्दिरों की रक्षा के लिए तन-मन-धन से लग जायेंगे और उनकी रक्षा में अपनी जान की बाजी लगा देंगे। दिल्लीवालो ! मेरा कहा मानो सब लोग मिलकर एक पचायत बनाओ, सारे मन्दिरों के द्रव्य को एकत्रित करो और पूँजी के बिना आजीविका-हीन तथा पाकिस्तानसे आने के कारण आश्रय-विहीन गरीब जैनों की सहायता करो, उनका स्थितिकरण करो और उन्हें सुखी बनाओ। 'न धर्मो धार्मिकैः बिना' और 'धर्मो रक्षति रक्षितः' के सूत्रों को मनन करो, तब तुम्हें पता लगेगा कि तुम्हारा आज क्या कर्तव्य है ?

उस चातुर्मास में प्रायः प्रतिदिन आचार्य महाराज ने अपने उपदेशों के द्वारा प्रत्येक जैनको सम्बोधन करके उन्हें उनके कर्तव्यों का ज्ञान कराया।

जिस समय महाराज उक्त प्रवचन कर रहे थे, उस समय महाराज के नेत्रों से आँसू टपाटप गिर रहे थे, और वे अत्यन्त गद्गद् स्वर से अपना उपदेश दे रहे थे। उनके प्रवचन के बाद मैंने महाराज के शब्दों का खुलासा करते हुए कहा था, कि यदि आचार्यश्री के सिवाय किसी अन्य गृहस्थ पंडित के मुख से उक्त शब्द निकले होते, तो पता नहीं, श्रोता लोग उसकी कैसी दुर्गति करते ? मेरा मत है कि इस उपदेश को मान लेने में समाज का कल्याण है।

(प्रवचन से)